पुस्तक समीक्षा

भाषा का बुनियादी ताना-बाना: एक संकलन

चयन व सम्पादन – रजनी द्विवेदी, हृदयकान्त दीवान, प्रकाशक – एकलव्य, भोपाल

दशरथ कुमार पारीक

यह संकलन भाषा को उसके सबसे गहरे और जटिल स्वरूप में समझने का एक प्रयास दिखता है। भाषा यहाँ केवल शब्दों, ध्वनियों या व्याकरणिक संरचनाओं का संग्रह नहीं, बल्कि मानव के संज्ञान, समाज, संस्कृति, अनुभव और सीखने की प्रक्रियाओं से गुंथी हुई एक जीवित व्यवस्था के रूप में उपस्थित होती है। प्रस्तुत संकलन के लेख इस तथ्य को अत्यंत स्पष्ट और विश्लेषणात्मक ढंग से सामने रखते हैं।

पहले खण्ड में भाषा की प्रकृति को उन उदाहरणों के साथ समझाया गया है जो मानव-भाषा की विशिष्टता और उसकी सृजनात्मक क्षमता को सहजता से उजागर करते हैं। दूसरे खण्ड में भाषा और विचार के परस्पर सम्बन्ध को इस प्रकार रेखांकित किया गया है कि पाठक समझ सके—सोच और भाषा का विकास साथ-साथ होता है। तीसरा खण्ड दिखाता है कि व्याकरण मूलतः भाषा में निहित प्राकृतिक नियमों की खोज है, और चौथा खण्ड भाषा के सामाजिक, राजनीतिक और ऐतिहासिक आयामों को ठोस संदर्भों सहित खोलता है।

मुझे विश्वास है कि यह संकलन पाठकों में भाषा को एक बहुस्तरीय, सजीव और मानवीय प्रक्रिया के रूप में देखने की दृष्टि विकसित करेगा। यह पुस्तक शोधार्थियों, शिक्षकों, विद्यार्थियों तथा भाषा में रुचि रखने वाले किसी भी पाठक के लिए नई अंतर्दृष्टियों के अवसर देने मे बतौर एक उपक्रम होगी। मैं संकलन के लेखों से जुड़े कुछ ख़ास पक्ष यहां साझा कर रहा हूं।

भाषा को प्रायः हम बोलने-सुनने की एक सामान्य क्रिया मान लेते हैं—कुछ शब्द, कुछ वाक्य, और एक संवाद। परंतु थोड़ी गहराई में उतरते ही स्पष्ट हो जाता है कि भाषा महज़ एक माध्यम नहीं, बल्कि मानव होने की मूल शर्त है। "भाषा का बुनियादी ताना-बाना" इसी गहराई को सरल, वैज्ञानिक और समझने योग्य रूप में सामने रखता है।

यह संकलन उन सबके लिए अपरिहार्य है जो भाषा को केवल व्याकरण या पाठ्यपुस्तक के दायरे में नहीं, बल्कि मानव-मस्तिष्क, समाज, संस्कृति, विचार और सीखने की प्रक्रिया के संगम के रूप में देखना चाहते हैं। रजनी द्विवेदी और हृदय कान्त दीवान ने चयन, सम्पादन और प्रस्तुति—तीनों स्तरों पर जिस सूझ-बूझ का परिचय दिया है, वह इस कृति को विशिष्ट बनाता है।

भाषा की जटिलता का सहज उद्घाटन

संकलन का पहला खण्ड पाठक को भाषा की आंतरिक बनावट, उसके जैविक आधार और बोलने की अनगिनत प्रक्रियाओं से परिचित कराता है। भाषा बोलना कितना स्वाभाविक लगता है, और वास्तव में वह कितना जटिल है—इसे पुस्तक बड़े रोचक उदाहरणों से साबित करती है। ध्वनियों का मेल, वाक्यों की

योजना, अनुमान, अर्थ-सृजन—सब एक साथ चलते हैं, ठीक उसी तरह जैसे कोई कुशल कलाकार अनेक क्रियाओं को एक साथ निभा लेता है। यह हिस्सा भाषा-विज्ञान से अनजान पाठक को भी सहज ही जटिल अवधारणाओं तक पहुँचा देता है। शिक्षक वर्ग अपनी विषय पैडागोजी में इसकी दृष्टि को समझने के साथ ही कुछ अभिनव प्रयोग करके देख सकता है।

भाषा और विचार—मनुष्य को गढ़ती हुई प्रक्रिया

दूसरा खण्ड इस संकलन की संकल्पनात्मक रूपरेखा को सबसे गहन स्तर पर व्यवस्थित और अर्थपूर्ण ढंग से प्रतिपादित करता है। इसमें बताया गया है कि भाषा केवल संप्रेषण का औज़ार नहीं, बल्कि सोचने, समझने और अपने अनुभवों को आकार देने की प्रणाली है। यह खण्ड मातृभाषा की भूमिका को अत्यंत संवेदनशीलता के साथ रेखांकित करता है—किस प्रकार बच्चे की सोच, अवधारणाएँ और आत्म-विश्वास उसकी अपनी भाषा में ही सबसे स्वाभाविक रूप से विकसित होते हैं।

भाषा और विचार के रिश्ते पर प्रस्तुत लेख पाठक को यह सोचने पर मजबूर करते हैं कि शब्द केवल नाम नहीं, बल्कि दुनिया को देखने के कोण हैं। पाठक महसूस करता है कि भाषा मानव-मस्तिष्क का विस्तार है—सोचने और समझने का अदृश्य ढाँचा।

व्याकरण—नियम नहीं, प्रकृति है

संकलन का तीसरा खण्ड उस बड़ी भ्रांति को तोड़ता है जिसमें व्याकरण को रटे जाने वाले नियमों का बोझ मान लिया जाता है। यहाँ व्याकरण को भाषा की स्वाभाविक प्रणाली, उसकी 'अन्तर्निहित व्यवस्था' की तरह समझाया गया है। बच्चे बिना पढ़ाए ही अपनी भाषा के नियम सीख लेते हैं—यह सत्य इस खण्ड में कई उदाहरणों और विश्लेषणों के माध्यम से स्पष्ट होता है। भाषा-शिक्षण के संदर्भ में यह दृष्टि अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह शिक्षकों को यह समझ देती है कि व्याकरण को सिखाना नहीं, बल्कि उजागर करना होता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 तथा एनसीएफ–स्कूली शिक्षा 2023 दोनों स्पष्ट करते हैं कि व्याकरण को भाषा से पृथक किसी नियम-पुस्तक की तरह नहीं, बल्कि अर्थ-निर्माण और संप्रेषण की वास्तविक प्रक्रियाओं के साथ एकीकृत रूप में पढ़ाया जाना चाहिए। नीति दस्तावेज़ बताते हैं कि बच्चे भाषा के पैटर्न स्वाभाविक प्रयोग के माध्यम से आत्मसात करते हैं; इसलिए व्याकरण-शिक्षण का उद्देश्य नियम थोपना नहीं, बल्कि प्रामाणिक भाषाई संदर्भों में नियमों को उभरने देना है। यह दृष्टिकोण भाषा-शिक्षण को यांत्रिक त्रुटि-शोधन के बजाय एक संज्ञानात्मक, विश्लेषणात्मक और प्रयोग-आधारित प्रक्रिया के रूप में स्थापित करता है।

भाषा और समाज—ताकत, पहचान और राजनीति

चौथा खण्ड भाषा को समाजशास्त्रीय नज़र से देखता है। कौन-सी भाषा 'शुद्ध' है? कौन-सी 'श्रेष्ठ'? क्या बोली किसी भाषा का 'कमतर' रूप है?—इन सभी गहरे सवालों पर यह खण्ड स्थापित धारणाओं को चुनौती देता है। यहाँ भाषा को सत्ता, अवसर, सामाजिक प्रतिष्ठा और पहचान से जोड़कर देखा गया है।

यह हिस्सा विशेष रूप से भारतीय संदर्भ में महत्वपूर्ण है जहाँ भाषा, लिपि, बोली और मानकीकरण को लेकर कई तरह की धारणाएँ प्रचलित हैं। संकलन इन मिथकों को तथ्यपूर्ण तर्कों से तोड़ता है और पाठक को भाषा-विविधता का सम्मान करना सिखाता है।

संकलन की समग्र दृष्टि

"भाषा का बुनियादी ताना-बाना" केवल अध्यायों का समूह नहीं, बल्कि भाषा को गहराई से देखने की एक समग्र दृष्टि प्रदान करता है—

- भाषा एक जैविक क्षमता भी है,
- एक मानसिक प्रक्रिया भी,

- एक सांस्कृतिक संरचना भी,
- एक सामाजिक शक्ति भी,
- और शिक्षण-अधिगम का आधार भी।

पुस्तक का सबसे अभिन्न पक्ष यह है कि कठिन अवधारणाओं को सरल उदाहरणों और कहानियों के माध्यम से खोला गया है। लेखक और सम्पादक ने यह सुनिश्चित किया है कि भाषा-विज्ञान जैसी जटिल विधा भी शिक्षक, विद्यार्थी और आम पाठक के लिए सहज और उपयोगी हो सके।

यह संकलन उन सभी के लिए आवश्यक है जो भाषा को एक जीवित, गतिशील और मानव-निर्माण की प्रक्रिया मानते हैं—विशेषतः शिक्षकों, शोधार्थियों और भाषा-संघर्षों से जूझते समाजों के लिए।

यह पुस्तक केवल पढ़ने की सामग्री नहीं, बल्कि सोच, समझ और शिक्षण-व्यवहार को दिशा देने वाला एक महत्त्वपूर्ण मार्गदर्शक है।